ख्याल

ख्याल राजस्थान का लोकप्रिय लोक-नाट्य है। राजस्थान के हृदय की झाँकी इसकी विभिन्न लोक-प्रवृत्तियाँ और लोककलाएँ हैं। ख्याल के केन्द्र को अखाड़ा कहते हैं जिसका एक प्रमुख या गुरु होता है। उत्तरप्रदेश का ख्याल और आज मुख्यतः राजस्थान का ख्याल एक अधिक विकसित रूप है जिसकी जड़े सामाजिक वाग्विदधता और हास्य में जितनी गहरी है, उतनी ही इसी नाम की साहित्य विधा में। इसके उद्‌गम स्रोत भी रास, चर्चरी, फागु आदि में ढूंढे गये हैं। इन रूपों ने सामाजिक नाट्य रूपों को जन्म दिया जो रमत, खेल, ख्याल आदि नामों से पुकारे जाते हैं। 18वीं शताब्दी में ख्याल जितना एक संगीत रचना था उतना ही एक काव्यात्मक और नाटकीय रचना भी और इस नये प्रकार के मनोरंजन का केंद्र आगरा था। धीरे-धीरे जहाँ इसी स्रोत से उत्तरप्रदेश में नौटंकी का विकास हुआ, वहीं राजस्थान में ख्याल लोकप्रिय हो गया। इससे स्पष्ट है ये दोनों विधाएँ घनिष्ठ रूप से एक दूसरी से जुड़ी

Scanned by CamScanner

हुई है। दोनों को तुलनात्मक दृष्टि से देखने से जहाँ दोनों में अनेक समानताएँ देखी जा सकती है, वहीं दोनों के अपने-अपने विशिष्ट स्वरूप की पहचान भी की जा सकती है। ख्याल की अनेक शैलियों का नामकरण या तो क्षेत्र के आधार पर हुआ है या समुदाय के आधार पर या प्रस्तुति के स्वरूप और शिल्प के आधार पर। मेवाड़ी ख्याल, जयपुरी ख्याल, कुचमनी, शेखावटी ख्याल, हाथरसी ख्याल आदि नाम इसी विशेषता के सूचक है। कथावाचक ख्याल, अभिनय ख्याल आदि नाम अंग चालन को अपेक्षाकृत अधिक महत्व देने के सूचक है। तुरा कलगी ख्याल, अलीबख्श ख्याल आदि अपने-अपने रचनाकारों के नाम को संकेत देते हैं। दंगली ख्याल प्रस्तुति के प्रकार का संकेत देता है। बीकानेर की तुर्राकलंगी ख्याल शैली भी प्रसिद्ध है। गुजरात की गरबा शैली की भी छाप है। मंगलपाठ को ख्याल में भेंट कहते हैं। मंगलापाठ में गणेश, भवानी, भैरव और विष्णु की वंदना की जाती है।

ख्याल की विषय-वस्तु पौराणिक कथाओं, दंत-कथाओं या ऐतिहासिक कथाओं से ली जाती है। साथ ही समसामयिक घटनाओं से भी विषय सामग्री ग्रहण की जाती है। रूक्मिणी मंगल, हरिश्चन्द्र तथा नल दमयंती जैसे ऐतिहासिक नाटकों का भी बहुत अधिक प्रचलन है। 'लैला मजनूं', 'ढोला मारू', 'पठान शहजादी' आदि प्रेम कथाएँ भी बहुत लोकप्रिय हैं। नरसी भगत तथा अन्य संतों के जीवन पर आधारित ख्याल भी है।

नृत्य नाटक के अन्य सभी रूपों की भाँति ख्याल की प्रस्तुति का प्रारंभ भी नगाड़ा बजा कर और विशिष्ट राजस्थानी वाद्य-यंत्रों के वादन तथा गायन द्वारा किया जाता है। नगाड़ा, ढोलक और मंजीरा तथा अब हारमोनियम भी ख्याल के मुख्य वाद्ययंत्र हैं। पात्र रंगमंच पर आकर अपना परिचय देते हैं यद्यपि इसके लिए विशेष आचरण या 'धरण' की अपेक्षा गायन की अधिक सहायता ली जाती है। परंतु बहुधा यात्रा की भांति प्रारंभ में नृत्य का बहुत अधिक आश्रय लिया जाता है।

प्रारंभ में गणेश वंदना या सरस्वती वंदना भी की जा सकती हैं, किंतु ऐसा करना आवश्यक नहीं है। यात्रा की भांति ख्याल का प्रारंभ भी अतिनाटकीय ढंग से होता है और पावन मानी जाने वाली वस्तुओं और आस्थाओं पर खूब कटाक्ष और व्यंग्य किया जाता है।

प्रत्येक ख्याल शैली ने अपने लिए विशेष रंगमंच प्रणाली और आधारभूत रंगसज्जा विकसित की है। निस्संदेह विभिन्न शैलियों की अलग-अलग पहचान जितनी अंतर्वस्तु, भाषा, बोली और संगीत शिल्प के आधार पर की जा सकती है उतनी ही रंगमंच के आकार-प्रकार पर भी की जा सकती है।

Scanned by CamScanner

तथापि रंगमंच की आधारभूत विशेषताएँ एक सी हैं। ये हमें संस्कृत नाटक के रंगमंच के निर्माण के सिद्धांतों का हल्के से स्मरण कराती है। इसमें प्रायः तीन या चार फुट ऊँचा एक मंच होता है। रंगमंच के चारों कोनों को केले के पेड़ के तनों से सजाया जाता है। इनके गिर्द दस से बारह फुट तक की ऊँचाई पर झालरों की एक रेखा सी चली जाती है। एक ओर मंच के ठीक सामने जमीन पर विशेष दृश्यों के लिए सफेद चादरें बिछा दी जाती है। तीन ओर दर्शक बैठते हैं प्रायः रंगमंच के पीछे एक और बाहर से बीस फुट तक की ऊँची बालकनी जैसी संरचना भी होती है। नाट्य प्रस्तुति में इन संरचनाओं से अनेक काम लिये जाते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि ये संस्कृत रंगमंच के अनेक स्तरों से विकसित हुई हैं। मुख्य रंगमंच पर पात्रों के उतरने के लिए सीढ़ी का प्रयोग किया जाता है। बहुधा इस प्रकार की बाल्कनियां दो से अधिक भी होती हैं।

ख्याल का रंगमंच एक सुनियोजित रंगमंच है जिसमें विविध प्रकार की नाट्यगत स्थितियों को प्रस्तुत करने का सामर्थ्य है। स्पष्टतः इसमें तीन स्तर हैं- बाल्कनी, मुख्य रंगमंच और लघु रंगमंच अथवा भूमि का वह भाग जिसमें सफेद चादरें बिछी रहती हैं। मंच पर अभिनेता और गुरू रहते हैं वादक नीचे मैदान पर होते हैं। मंच सजाए जाते हैं इसमें दृश्य नहीं बदलते हैं।

अन्य नाट्य रूपों की भाँति ही ख्याल के मुख्य पात्र पुरुष ही होते हैं और नारी पात्रों की भूमिकाएं सिद्धहस्त पुरुष कलाकार निभाते हैं और ये भूमिकाएं सफल होने के साथ-साथ कला की दृष्टि से भी बहुत संतोषप्रद होती है। ख्याल की वेशभूषा और रूपसज्जा की विधियां सहज और नैसर्गिक हैं। समय सापेक्ष पोशाक इस्तेमाल की जाती है और यद्यपि बालों की विशेष प्रकार की टोपी का प्रचलन है किंतु उसमें कोई शैलीकरण नहीं है। ख्याल में न तो मुखौटों का प्रयोग किया जाता है और न ही अत्यधिक रूप सज्जा के द्वारा चहेरों को बदला जाता है।

ख्याल के संवाद गद्यांशों सस्वर पाठ किये जाने वाले अंशों तथा गेय अंशों और नृत्य के द्वारा की जाती हैं इसे हम भारतीय नाटक का मानक ढांचा भी कह सकते हैं। जिन छंदों का प्रयोग किया जाता है वे हैं दोहा, कविता, सेहेरा तथा सोरठा, परंतु चौपाई का प्रचलन लगभग नहीं है तथा सोरठा, जोगिया, भैरवी, आसावरी आदि रागों का प्रयोग कुछ पात्रों द्वारा और संवाद के कुछ अंशों में किया जाता है।

आज हमारे देश की ज्यादातर जनता इन लोककलाओं से अपना मुंह मोड़ रही हैं जिससे इनका अस्तित्व खतरे में है। कहने को हम आज 21वीं सदी के आधुनिक समाज में जी रहे हैं परंतु हम आज भी ख्याल जैसे लोककलाओं के कलाकारों को अच्छी दृष्टि/सम्मानित दृष्टि से नहीं देखते हैं जो कि एक चिन्ता का विषय है।

माच

माच अथवा माच मालवा का परंपराशील नाट्य-शैली है। मांच शब्द मंच और मंचन दोनों में प्रयुक्त होता है माच शब्द संस्कृत के मंच का अपभ्रंश है। मंच-निर्माण और अभिनय में शास्त्रीय पद्धति का ध्यान जाता हैं 19वीं शताब्दी में जॉन मैलकम ने प्रदर्शित एक माच का विवरण दिया है। इसमें गणेश, शिव व दशावतार को प्रस्तुत किया जाता है। साथ ही नए कारिन्दों के कुकृत्यों पर भी चोट की जाती है कि कैसे वे ग्रामीणों की उपेक्षा करते हैं और फिर अपमानित होते हैं।

माच की विषयवस्तु में पौराणिक प्रसंगों तथा इतिहास से लेकर समसामयिक सामाजिक व्यंग्य तक के विषयों का समावेश है। राजा हरिश्चन्द्र की कथ विशेष रूप से लोकप्रिय है। यही स्थिति उन नाटकों की भी है जो राजा विक्रमाजीत जैसे ऐतिहासिक चरित्रों को आधार बनाकर लिखे गए हैं। 'राजा-भरथरी', 'नरसी मेहता', 'नल-दमयंती', 'मैना-सुंदरी' पर भी अच्छा माच है।

जहाँ तक रंगमंच के स्वरूप का संबंध है, माच और ख्याल दोनों में एक ही प्रकार के रंगमंच का प्रयोग होता है। एकस्तरीय और द्विस्तरीय दोनों ही रंगमंच होते हैं। मंच बनाने के स्थान पर कुछ दिनों पूर्व एक स्तंभ स्थापित किया जाता है। फिर उसकी पूजा होती है। मंच करीब 10 फीट ऊँचा होता है। मंच सजाया जाता है। सामने कुछ ऐसे लोग होते हैं, जो बैठकर अभिनेता के बोल दोहराते हैं। एक ओर गुरु का आसन होता है, दूसरी ओर वादक बैठते हैं। दर्शक तीन ओर बैठते हैं। देवी-देवताओं की वंदना होती है। भोपाल भिश्ती पानी का छिडकाव करता है। देवी की वंदना के बाद देवी आकर आशीर्वाद देती है। चौबदार पात्रों का परिचय कराता है।

माच के संवाद प्रायः पद्य शैली में एवं गायन शैली में होते हैं। संवाद और अभिनय में सजीवता रहती है। माच में संगीत प्रमुख होता है। इसमें ढोलक, नगाड़ा तथा हारमोनियम का स्थान प्रमुख होता है तथा इन सबके बिना माच की कल्पना नहीं की जा सकती है।

माच में काम करने वाले कलाकार अधिकतर पुरुष होते हैं जो स्त्रियों की भूमिका को भी निभाते हैं। माच की वेशभूषा और रूपसज्जा की विधियों सहज और नैसर्गिक होती है। कथा की विष्य-वस्तु के आधार पर ही इनकी वेशभूषा होती है।

वैसे माच के प्रवर्तक मुकुंद गरु माने जाते हैं। उन्होंने 13 माच लिखे और अभिनय भी किया 'शेरमार खां' माच के विदूषक का नाम होता है, चाहे वो नाटक 'राजा भरथरी' ही क्यों न हो।

Scanned by CamScanner

मध्यप्रदेश में मालवा के माच और हरियाणा के सांग नाटक केवल देहातों में ही सीमित रह गए हैं उनका वर्तमान रूप नहीं के बराबर व्यावसायिक है और वे कृषि से अवकाश के समय किसानों अथवा खेत-मजदूरों की अथवा किसी जाति-विशेष की मौसमी गतिविधियों से अधिक नहीं है। उनके नाटकीय स्वरूप में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है पर इस ठहराव के कारण उनकी पकड़ और लोकप्रियता घटी है।

Scanned by CamScanner